धर्म का उत्थान व अधर्म का उन्मूलन

ब्रह्माकुमार राम लखन, श

राजनीतिक असत्यता से जो अनर्थ हुये हैं उनकी पूर्ति राजनीतिक सत्यता से ही हो सकेगी। सामाजिक जीवन में विशुद्ध सत्य का ही साम्राज्य होना चाहिये। सत्य—अहिंसा—शुचिता—ब्रह्मचर्य व अपरिग्रह ही सामाजिक जीवन के मूलाधार हैं। नि:सन्देह भाषण व कर्म की स्वतन्त्रता होनी चाहिये पर वैचारिक स्वतन्त्रता का अर्थ यह कदापि नहीं है कि असामाजिक व भ्रष्ट विचार प्रकट किये जायें। न ही भाषण की स्वतन्त्रता का भाव है कि असत्य व अश्लील भाषण किये जायें। कर्म की स्वतन्त्रता का भी मतलब यह नहीं कि नंगा नाच किया जाये। विचार—भाषण तथा कर्म की आधुनिक आजादी ने न्याय का गला दबाकर अन्याय का साम्राज्य कायम कर दिया है।

सत्याचार की बजाय अब तो अनाचार—दुराचार फल—फूल रहा है। सामाजिक शुचिता की जगह हर तरफ सामाजिक विषमता को बढ़ावा मिल रहा है। पवित्रता की बजाय खुले व्यभिचार के बाजार गर्म हैं। पवित्र धन का गलाकाट कर भ्रष्टाचार—चोर बाजारी का साम्राज्य छाया हुआ है। फलस्वरुप सारी दुनियाँ में धर्म ग्लानि बढ़ती ही जा रही है। पुण्य और धर्म मुँह छिपाने के लिये शरण ढूढ़ रहे हैं। मनुष्य सृष्टि रूपी कल्प वृक्ष का मूल तो धर्म ही है। धर्मपूर्वक कमाया हुआ धन ही लोकहितकारी बन परम पद की प्राप्ती कराता है। समाज से सत्य धर्म के ओझल होते ही धनोपार्जन में अशुद्धि आ जाती है। स्वार्थपरता के वशीभूत हो, लोग अनर्थ करने लगते हैं। उसके पीछे फिर अन्याय, शोषण तथा व्यभिचार आदि बढ़ने लगते हैं। धन के धर्म से अलग होते ही संसार पाप से भर जाता है। दिव्यगुणी के बजाय आसुरी वृत्ति वालों के बढ़ जाने से धरा बोझिल हो त्राहिमाम्—त्राहिमाम् करने लगती है।

अधर्म को अट्टहास करता देख धरा पर भगवान का अलौकिक अवतरण हुआ है। गीता के श्री बचनों के अनुसार निराकार सर्वशक्तिवान साधारण मानव तन का आधार लेकर अधर्म के नाश और धर्म की स्थापना का जयघोष कर रहे हैं। वे एक साधारण तन का आधार लेते हैं। कलयुगी दुनिया द्वारा उसका घोर विरोध होता है। साधन विहीन अकेले होते हुये भी वह तूफानों की तरह आगे बढ़ता ही जाता है। बैर—विरोध के ऊँचे पर्वत उसका द्वार बन्द करना चाहते पर तप—साधना की ज्वाला हर मुश्किलों को आसान करती रहती है। निर्भय हो प्रतिकूल परिस्थितियों का मुकाबला करते हुये दायें—बायें न देख वह विघ्न—बाधाओं को चूर करता जाता है। विकराल परिस्थितियों से भी न घबराने के कारण उसमें अदम्य शक्ति आ जाती है। जहाँ धर्म है वहाँ विजय है। फिर डर या घबराहट किस बात की ? जो सत्य धर्म पर है व न दबाये दबेगा, न मिटाये मिटेगा न ही हटाये हटेगा । धर्म संस्थापक, भय घबराहट को पास भी नहीं आने देते हैं। डर से ही मनुष्य का मन—मस्तिष्क, अस्त—व्यस्त होता है। उसकी उच्च भावनायें व बुद्धि का नाश हो जाता है। फलत: उसका साहस और कार्यक्षमता घट जाती है। निराशा, साधना को ही समाप्त कर देती है। अदम्यता व निर्भयता से हमारा मनोबल सारे संसार के लिये खुशियाँ लुटाता रहता है। उच्च भावनाओं के कारण धर्म संस्थापक अतुलनीय क्षमता और अदम्य साहस से सदा भरे रहते हैं। उनकी बलवती बुद्धि कठिनत्तम परिस्थितियों को भी चकनाचूर कर देती है। उसे उत्तरोत्तर साधना पथ पर अग्रसर करते हुये उसका पथ प्रशस्त करती रहती है। वे धर्म की धारणाओं में सदा निरत रहते हैं। मार्ग की चढ़ाई—उतराई उनके ओज को ब्रह्मा—सरस्वती की तरह और ही उभारती रहती है। प्रत्येक कठिन मोड़ उनका धैर्य साहस—उत्साह और सत्यता को शक्तियाँ प्रदान करते हुये उत्प्रेरित करता ही रहता है।

सत्य धर्म के उच्च धारणाओं की मस्ती सच्चे अर्थों में सुख—शान्ति—आनन्द की अभिवृद्धि करती है। साहसहीन व्यक्ति पुष्ट होने पर भी उद्वात्त उत्तरदायित्व को निभाने में झिझकता है। साहसी कृषकाय होने पर भी महान उत्तरदायित्वों को सहर्ष निर्वहन करता है। उमंग उत्साह से रिक्त लोग

प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़े रहते हैं। उत्साही सदा सरस और आगे रहता है। संकल्पवान सदा जवान पर संकल्पहीन सत्वहीन होते हैं। ऊँचे संकल्प असम्भव को भी सम्भव कर दिखाते हैं। शुभ—संकल्प समाज परिवार—व्यक्ति—संस्था व राष्ट्र की भी कायापलट करते हैं। सारी दुनियाँ को नई दिशा दे सकते हैं। धर्म संस्थापकों का जीवनकाल क्षमता, आत्मविश्वास और प्रसन्नता से भरा ही रहता है। शुद्ध भावनाओं—निर्मल—निर्विकार व उदार विचारों से मानवता में वे चुस्ती तथा मस्ती भर देते हैं। शिथिलता को ठुकराते हुये वे हरेक में भी मस्ती और चुस्ती भरते जाते हैं। सब में रुचि रखने से सबकी भी उस में सुरुचि बनी रहती है। उसकी रमणीकता सबके मन को अपनी ओर खींचें रखती है।

स्वभावत: नारियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक धर्मशीला होती हैं। परिवार—समाज व राष्ट्र से उनकी शिक्षा—दीक्षा का ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये कि वे स्वत: स्वपथगामिनी बन जायें। धर्मचारी माताओं की संतानें सदाचारी होती हैं। माता के अंगों से ही बच्चों के अंग—अवयव बनते हैं। इसलिये पुरुषों से भी अधिक महिलाओं के स्वास्थ्य शील और धार्मिक उन्नति का ध्यान रखना चाहिये। महिलायें शुभ—शोभा—सुरुपा और सुशोभनीया व शिक्षित होनी चाहिये। वे शारीरिक रूप से स्वच्छ व स्वस्थ हों तो प्रसन्न बदना बन सुन्दर वस्त्र आभूषणों से धर्म की धरा पर पताका फहराने में अग्रणी भूमिका निभायेगी।

- ब्रह्माकुमारीज् वार्ता फिचर्स
www.bkvarta.com